पाठ्यचर्या सम्बन्धी हस्तक्षेप के माध्यम से सामाजिक दूरी को पाटना

शुभ्रा चटर्जी

मैं इस लेख की शुरुआत कोलकाता शहर के दक्षिण-पश्चिमी किनारों में स्थित कुछ स्कूलों के साथ किए गए काम के उदाहरण के साथ करूँगी। इस इलाके के आसपास की अनौपचारिक अर्थव्यवस्था काफ़ी मज़बूत है क्योंकि यहाँ पतंग बनाने का काम, ज़री का काम, कढ़ाई इत्यादि की जाती है। बच्चे अक्सर अपनी पारिवारिक आय बढ़ाने के लिए इन कार्यों में लगे रहते हैं। इन परिवारों को प्रतिदिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जिसके कारण शिक्षा को कम प्राथमिकता दी जाती है। बच्चे भी उन स्कूलों में जाने के लिए अनिच्छुक होते हैं जहाँ वे ठीक से तालमेल नहीं बैठा पाते हैं।

सीखने का माहौल बनाना

शिक्षकों का दृष्टिकोण

अगर हम चाहते हैं कि हर बच्चे को सीखने के अवसरों का लाभ मिले तो उसके लिए हमें एक ऐसे स्थान की ज़रूरत होती है जो सीखने में सहायक और उत्साहजनक हो। विशेष रूप से उन बच्चों के लिए जो कई प्रकार की बाधाओं का सामना करते हैं, जैसे कि उन स्कूलों के बच्चे जिनके बारे में मैं बात कर रही हूँ। चूँकि वे प्रवासी परिवारों के बच्चे हैं, इसलिए उनके ठीक से न सीख पाने का मुख्य कारण सामाजिक-भाषाई अवरोध है, क्योंकि स्कूलों में दी जाने वाली शिक्षा का माध्यम बंगाली है। निःसन्देह, घर और स्कूल की भाषा के बीच की खाई सीखने के लिए एक बड़ी बाधा है। लेकिन बच्चों के साथ शिक्षकों की सामाजिक दूरी और विद्यार्थियों की विशिष्ट एवं विभेदित सीखने की ज़रूरतों को प्रभावी ढंग से सम्बोधित न कर पाने की उनकी असमर्थता मुख्य रूप से बच्चों में प्रेरणा के निम्न स्तर के लिए ज़िम्मेदार है।

कक्षा के एक मुख्य घटक के रूप में शिक्षक ही कक्षा के समग्र वातावरण के लिए ज़िम्मेदार होते हैं एवं शिक्षक के व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द ही बच्चों का प्राथमिक समाजीकरण और अधिगम होना चाहिए। लेकिन इन स्कूलों में यह बात दिखाई नहीं दी। हम इन बच्चों के सामाजिक सन्दर्भ से परिचित थे। हम इस क्षेत्र में काफ़ी समय से शहर की पुलिस के सहयोग से एक दिलचस्प परियोजना में काम कर रहे थे, जिसमें पुलिस स्टेशनों के अन्दर शिक्षा-केन्द्र स्थापित किए गए हैं। विडम्बना यह है कि पुलिस स्टेशनों के *भीतर* के यह सुरक्षित स्थान बच्चों को एक भयमुक्त और सुरक्षित वातावरण प्रदान करने में सक्षम हो पाए क्योंकि वयस्कों और सम्बन्धित बच्चों के बीच भावनात्मक जुड़ाव और मेलभाव था। इन केन्द्रों में रखे गए हमारे संगठन के शिक्षकों ने देख-रेख करने वालों की भूमिका भी निभाई।

सुरक्षित स्थान

इन केन्द्रों में शिक्षकों ने इस बात का विशेष ध्यान रखा कि बच्चों के मन में अपनत्व का भाव जागे। उनके माता-पिता को लगे कि स्कूल में उनका स्वागत है और वे स्कूल के साथ जुड़ाव महसूस करें। इनमें से अधिकांश बच्चे अपनी भाषाई और/या धार्मिक पृष्ठभूमि के कारण सामाजिक बहिष्करण के सूक्ष्म या प्रत्यक्ष रूपों का सामना करते हैं। उनकी पारिवारिक परिस्थितियों के कारण उनके साथ 'सम्भावित अपराधिता' का कलंक भी जुड़ा हुआ है, क्योंकि शहर के इस हिस्से में अपराध की दर अधिक है। वैसे यहाँ आने वाले बच्चे सीखने के लिए उत्सुक रहते हैं और शायद ही कभी अनुपस्थित होते हैं।

इन इलाकों में बच्चों के साथ अपने काम के माध्यम से हमें यह महसूस हुआ कि अगर अधिगम को प्रभावी बनाना है तो सबसे ज़्यादा ज़रूरी है, चिन्ता-मुक्त व भावनात्मक रूप से सुरक्षित स्थान, जिसकी प्रकृति समावेशी हो। एक ऐसी जगह जहाँ बच्चे बिना किसी डर या झिझक के ख़ुद को अभिव्यक्त कर सकें। इसलिए जब सरकार ने आस-पास के प्राथमिक विद्यालयों को समान प्रकार की सहायता प्रदान करने के लिए हमसे सम्पर्क किया तो हमें बहुत प्रसन्नता हुई।

शिक्षक जानते थे कि इस काम में कई जटिलताएँ पेश आएँगी। हमारी पहली चर्चा में शिक्षकों ने इन जटिलताओं को सम्भालने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। वे जानते थे कि भाषा की बाधा के कारण पाठ्यपुस्तक पढ़ाना सही तरीक़ा नहीं था, लेकिन वे यह नहीं जानते थे इसके जाल से कैसे निकला जाए। उन्होंने कहा कि जिस स्तर पर उनके बच्चे हैं, उसकी तुलना में पाठ्यपुस्तकों का स्तर बहुत ऊँचा है। उन्होंने स्वीकार किया कि वे एक ऐसी व्यवस्था का हिस्सा हैं जो बच्चों के *अधिगम* से अधिक *पाठ्यक्रम पूरा* करने को प्राथमिकता देती है। यह स्पष्ट था कि वे ख़ुद को गौण महसूस करते थे जहाँ चीज़ें उनके नियंत्रण में नहीं थीं। स्वायत्तता की कमी और इस वजह से अपने शिक्षकीय दायित्व को न निभा पाने का प्रभाव उन बच्चों पर पड़ा, क्योंकि उनको अपर्याप्त और अयोग्य महसूस कराया जाता था। कक्षाएँ अनालंकृत, अनाकर्षक और बदहाल थीं। अनुपस्थिति बहुत अधिक थी और अनुशासन लागू करना कठिन था।

परिवर्तन करना

कक्षा का परिवर्तन

चूँकि अधिगम की पूर्वशर्त है एक स्नेहिल और सहायक वातावरण, इसलिए यह निर्णय लिया गया कि शिक्षकों की परिवर्तनकारी यात्रा की शुरुआत इसी तरह के स्थान के निर्माण से शुरू की जानी चाहिए। पहला क़दम शिक्षकों और बच्चों द्वारा संयुक्त रूप से कक्षा की सफ़ाई करना था। फिर वे कक्षा की दीवारों को सुन्दर बनाने के लिए कुछ चार्ट और पोस्टर तैयार करने में जुटे। प्रत्येक समूह को एक कार्य सौंपा गया था - एक समूह ने कक्षा के नियमों पर कार्य किया, दूसरे समूह ने एक भावना-मानचित्रण चार्ट तैयार किया, जबकि तीसरे ने एक संख्या-ग्राफ तैयार किया। बच्चों ने काग़ज़ की प्लेटों पर अपने चित्र बनाए और उनके नीचे अपनी पसन्द-नापसन्द व्यक्त करने वाले छोटे-छोटे नोट लिखे। जल्द ही उनकी कक्षा आकर्षक और रंगीन लगने लगी : दीवार पर ख़ुद के किए कार्य देखकर बच्चों को गर्व और अपनेपन का एहसास हुआ।

इसके अलावा ऐसा पहली बार हुआ था कि वे एक साथ बैठकर अपने शिक्षकों के साथ समूह में काम कर रहे थे। अपने चार्ट और पोस्टरों पर काम करते हुए उन्होंने अनौपचारिक रूप से एक-दूसरे के साथ और शिक्षकों के साथ भी बातचीत की। शारीरिक और भावनात्मक रूप से अपने शिक्षकों के क़रीब आने से बच्चों का तनाव कम हुआ और उन्हें सहज रूप से खुलकर बोलने में मदद मिली। वे सक्रिय और उत्साहित थे, फिर भी अनुशासन की कोई कमी नहीं थी जिसका कि शिक्षकों को डर था। हालाँकि इस अनुभव के बाद वे पुनः अपने सामान्य तरीक़े यानी पंक्तियों में बैठने लगे और औपचारिक रूप से बातचीत करने लगे, किन्तु यह छोटा-सा अभ्यास कक्षा के वातावरण में एक सूक्ष्म बदलाव ले आया।

बातचीत के माध्यम से अन्तःक्रिया

अच्छी शुरुआत को बनाए रखने के लिए अब एक ऐसी गतिविधि शुरू करना आवश्यक था जो सम्प्रेषण की बाधाओं को तोड़ सके। चूँकि स्कूल रूढ़िवादी स्थान होते हैं, इसलिए गतिविधि ऐसी होनी चाहिए जो उनके नियमित शिक्षण का हिस्सा हो। हमने महसूस किया कि इसके लिए एक आसान प्रवेश बिन्दु है : *मौखिक भाषा का विकास* - जो पाठ्यचर्या में उल्लिखित एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है लेकिन हमारे स्कूलों में शिक्षक शायद ही कभी इसका पालन करते हैं।

यद्यपि यह सार्वभौमिक रूप से स्वीकार किया जाता है कि अपने विचारों को सही तरह से व्यक्त करने की मौखिक क्षमता (Oracy) साक्षरता की नींव है, लेकिन प्राथमिक विद्यालयों में ध्यान केन्द्रित किया जाता है लिखना एकदम अलग-थलग करके सिखाने पर मानो कि बोलचाल की भाषा से इनका कोई लेना-देना नहीं है।



वार्तालाप भाषा के विकास के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण है - सोच और विचारों का आदान-प्रदान, दूसरों को सुनना कि वे कैसा महसूस करते हैं, क्या अनुभव करते हैं – यह सब सामाजिक और भावनात्मक रूप से समृद्ध करने वाली प्रक्रियाएँ भी हैं। बातचीत के माध्यम से, बच्चों और शिक्षकों दोनों को एक-दूसरे को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिलती है। लेकिन शिक्षक को इस तरह की वास्तविक बातचीत करने के लिए अभ्यास करना पड़ता है जिसमें झिझक टूटे और बच्चे केवल सवालों के जवाब देने की बजाय, सही मायनों में बात करें। बात करना अधिगम के प्रमुख कारकों में से एक है लेकिन फिर भी अभी तक शिक्षण के पारम्परिक उपदेशात्मक (didactic) तरीक़े में, कक्षा की बातचीत में शिक्षक ही प्रधान भूमिका निभाते हैं। बच्चों को समवेत स्वरों में या एक शब्द में जवाब देने के अलावा शायद ही कभी अपनी बात व्यक्त करने का मौका दिया जाता है। इसके कारण बच्चे अधिगम के एक निष्क्रिय माहौल के आदी होते जाते हैं, जिसका उनकी प्रेरणा और उपलब्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

वास्तविक जीवन के उदाहरण

केस स्टडी 1

हम जिन शिक्षकों के साथ काम कर रहे थे, उनमें से नन्दिता नामक एक शिक्षिका ने अपनी तीसरी कक्षा के बच्चों के साथ बातचीत शुरू करने का फैसला किया। शुरू में उन्हें अपनी 'शिक्षिका' वाली आवाज़ को छोड़कर बोलचाल के लहजे में बच्चों से बात करने में दिक्क़त हुई। फिर उन्होंने एक सरल-सी गतिविधि के बारे में सोचा।

नन्दिता ने कुछ पर्चियाँ बनाईं, जिनमें बातचीत के कुछ अनिर्दिष्ट से विषय लिखे जैसे – कंकड़, दुकान, मिठाइयाँ, गली वगैरह और बच्चों से जोड़े में आकर पर्ची उठाने के लिए कहा। फिर उनसे कहा कि वे अपने साथी के साथ इस विषय पर चर्चा करें और फिर कक्षा को उसके बारे में बताएँ। प्रारम्भ में बच्चों को भी अपना लहजा बदलने में समस्या हुई। वे अजीब-सा महसूस कर रहे थे और कक्षा की बातचीत में इस्तेमाल की जाने वाली अस्वाभाविक भाषा का उपयोग करने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन जब एक बच्चे ने इस शैली से हटकर कहा



कि उसके चाचा की आलू-चाट की दुकान है तो जैसे सारी रुकावटें अचानक टूट गईं और सभी ने सहजता से जवाब देना और बातचीत करना शुरू कर दिया और शिक्षक भी निर्बाध रूप से बातचीत में शामिल हो गए।

कक्षा के वातावरण में जो परिवर्तन आया वह स्पष्ट रूप से नज़र आ रहा था। बच्चे वास्तव में गतिविधि में तल्लीन हो गए थे तथा रुकना नहीं चाहते थे। जानकारी का प्रवाह एक तरफ़ा नहीं रहा। बच्चों ने भी अपने अनुभवों के आधार पर बातें साझा कीं। बाद में नन्दिता ने बताया कि इस साधारण-सी गतिविधि के माध्यम से उन्हें बच्चों के निजी जीवन के बारे में बहुत कुछ पता चला, जिसके बारे में उन्हें महीनों तक उनके साथ रहने के बावजूद नहीं पता था। इस प्रकार *वास्तविक बातचीत* केवल भाषा-विकास के लिए ही नहीं बल्कि शिक्षकों के लिए भी एक ऐसा आधार है जिसकी सहायता से वे बच्चों की रुचियों और उनके सामाजिक सन्दर्भों के बारे में बेहतर रूप से समझ सकते हैं।

केस स्टडी 2

चूँकि पढ़ने और लिखने पर ज़ोर देना अनिवार्य है, इसलिए नन्दिता ने लेखन के लिए एक अलग दृष्टिकोण आज़माने का फैसला किया। बच्चों को अपनी ड्राइंग के विस्तार के रूप में चीज़ों के बारे में लिखने के लिए कहना। पहले बच्चों से कहा गया कि वे अपनी मर्ज़ी से कोई भी चित्र बनाएँ। जब उन्होंने चित्र बना लिया तो उनसे अपने चित्र के बारे में और उस विषय या थीम को चुनने का कारण बताने के लिए कहा। अब तो बच्चे वास्तव में सोचने लगे और नन्दिता ने सवाल पूछकर इस प्रक्रिया में उनकी मदद की और इसे आगे बढ़ाया।

उसके बाद उन्होंने बच्चों से कहा कि वे अपनी चर्चा के बारे में लिखें। साँचे को तोड़ना मुश्किल था क्योंकि अधिकांश बच्चे वही सामान्य से चित्र बनाने लग गए जैसे - एक घर जिसके पीछे पहाड़ थे और आसमान में सूरज। लेकिन कुछ ने मौलिकता दिखाई। एक बच्चे ने एक झरने की तस्वीर बनाई थी और शिक्षक को बताया था कि कैसे उसके पिता उसे एक झरना दिखाने ले गए थे। एक अन्य बच्चे ने एक उल्लू का चित्र बनाया और कहा कि उसे लगता है कि यह सबसे सुन्दर पक्षी है। दूसरे बच्चे ने गाय का चित्र बनाया जिसे एक व्यक्ति खींचकर ले जा रहा था, उसने कहा कि यह दृश्य उसने अपने घर के पास देखा था।

इसके पहले सभी बच्चे स्कूल की भाषा के साथ जूझ रहे थे। नन्दिता इस बात से हैरान थीं कि इस सरल गतिविधि ने कैसे इतनी भाषा का निर्माण किया और सभी बच्चों को अपने डर और झिझक को दूर कर लिखना शुरू करने के लिए प्रेरित किया। वे ऐसा कर सके क्योंकि उन्हें अपने लेखन से जुड़ाव महसूस हुआ क्योंकि यह उनकी आन्तरिक भावनाओं और अनुभवों से निकला था।

अँग्रेज़ी सीखने के डर पर काबू पाना

अँग्रेज़ी पढ़ाना शिक्षकों के लिए एक अन्य चुनौतीपूर्ण कार्य था, ख़ासकर इन बच्चों को पढ़ाना। एक तो अँग्रेज़ी भाषा का उपयोग करने में ख़ुद शिक्षकों में आत्म-विश्वास की कमी थी, दूसरे बच्चों का इस भाषा के साथ अधिक सम्पर्क नहीं था; अतः उन्हें पाठ पढ़ाने में बहुत दिक्क़त पेश आई क्योंकि पाठों का स्तर बच्चों की क्षमता की तुलना में बहुत ऊँचा था। यह चौड़ी खाई उनके मन में धीरे-धीरे अँग्रेज़ी का डर पैदा कर रही थी, लेकिन फिर भी वे इसे सीखना चाहते थे क्योंकि यह उनकी 'आकांक्षा भाषा' है।

हमें लगा कि इस डर को दूर करने के लिए एक रणनीति के रूप में संगीत और कविताएँ ठीक रहेंगी। संगीत किसी नई भाषा को सीखने-सिखाने का एक आनन्दप्रद तरीक़ा है क्योंकि इसमें भाषा की कोई बाधा नहीं है। जब हमने अँग्रेज़ी की कविताओं जैसे *When you're happy and you know it, clap your hands or In the morning, in the morning, I brush my teeth everyday* – को अभिनय के साथ करवाया तो एक सुरक्षित, परिचित और सुखद वातावरण का निर्माण करने में मदद मिली। कविताएँ गाते-गाते *समग्र शारीरिक अनुक्रिया (टोटल फिज़िकल रिस्पान्स – टीपीआर)* तकनीक का उपयोग करने से बच्चों को बिना सचेत प्रयास के नए शब्दों के साथ-साथ भाषा की कुछ संरचनाओं को सीखने में मदद मिली। किसी अनुवाद या स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं थी। बच्चों ने अभिनय से अर्थ का अनुमान लगा लिया था और जो कुछ भी कहा जा रहा था वे उसके साथ आसानी से जुड़ सके। शिक्षकों को यह देखकर ख़ुशी हुई कि उनके विद्यार्थियों ने सीधे रूप में पढ़ाए बिना अनायास ही काफ़ी अँग्रेज़ी शब्दावली का अधिग्रहण कर लिया था।

किसी भी नए अधिगम को आत्म-सात करने के लिए सुदृढ़ीकरण महत्त्वपूर्ण है। इसलिए हमने कुछ खेल और संरचित बातचीत सत्र आयोजित किए, जिनमें इन नए शब्दों और संरचनाओं का उपयोग किया गया था। उदाहरण के लिए, *Simon Says* खेल में *clap your hands*, *stamp your feet, shake your leg* जैसे शब्दांश इस्तेमाल किए गए। बातचीत के लिए, What *do you do in the morn-*

ing? वाक्य संरचना का इस्तेमाल किया गया था - और बच्चे कविता की उन पंक्तियों का उपयोग करके आसानी से जवाब दे पाए जो उन्होंने तभी सीखी थी जैसे *I brush my teeth, I comb my hair, I take my bath* आदि।

कविताओं के *दोहराव* वाले पैटर्न, जिसमें संरचना को बरकरार रखते हुए प्रत्येक पंक्ति में कुछ नए शब्दों से परिचित करवाया जाता है, के कारण बच्चों को आत्म-विश्वास के साथ और बिना किसी झिझक के भाषा का उपयोग करने में आसानी हुई। शिक्षकों ने देखा कि कविताओं को दोहराने से बच्चों को भाषा के अवरोधों को दूर करने में मदद मिली। फिर दृष्टि-शब्दावली विकसित करने के लिए कुछ शब्दों को 'शब्द दीवार' पर लिखा गया जैसे *hands, feet, teeth, hair* इत्यादि। कविताओं और खेल ने बच्चों को भाषा की ध्वनियों से परिचित कराने और शब्दों के उच्चारण में मदद की; इससे वे *अक्षर-ध्वनि सम्बन्ध* स्थापित करने के लिए तैयार हो पाए जो कि उनके अधिगम का अगला क़दम था।

इस प्रकार किसी नई भाषा को सीखने के सभी तीन प्रमुख तत्वों यानी - नए शब्द सीखना, नई संरचनाएँ सीखना और अक्षर-ध्वनि सम्बन्ध सीखना को सम्भव बनाने के लिए ऐसे तरीक़ों का उपयोग किया गया जिसमें बच्चों को बेहद आनन्द आया। भय और चिन्ता को दूर करके भावात्मक फिल्टर(affective filter) को कम करने से अनुकूल अधिगम सजगता के निर्माण में मदद मिली।

अधिगम के क़दम

यह एक ऐसी पहल का उदाहरण है जिसे अभी शुरू किया गया है। यह इस आधार पर डिज़ाइन किया गया है कि अगर अधिगम को बच्चों के जीवन के लिए प्रासंगिक बनाया जाए; अगर उसे समानुभूति और समझ के साथ पेश किया जाए; और अगर पूरी प्रक्रिया में शिक्षक की भागीदारी हो तो सभी बच्चे सीख *सकते* हैं और *सीखेंगे।*

कक्षा की अन्तःक्रिया में बदलाव लाने के लिए जिन संज्ञानात्मक रणनीतियों का इस्तेमाल किया गया, वे हमें पिछले तीस वर्षों में विविध भौगोलिक और सामाजिक सन्दर्भों में, हाशिए के बच्चों के साथ पूरक शिक्षा केन्द्रों या समुदाय-आधारित शिक्षा शिविरों या सरकारी स्कूलों में कक्षाओं की औपचारिक संरचना के भीतर काम करने के अपने अनुभव से प्राप्त हुई हैं। इन रणनीतियों की विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

- भाषा के विकास और उच्चतर संज्ञानात्मक कौशल, सामाजिक और भावनात्मक विकास के लिए कक्षा की चर्चाओं को एक महत्त्वपूर्ण उपकरण के रूप में बढ़ावा देना।
- स्वामित्व निर्माण और एक स्नेहिल एवं अनुकूल वातावरण बनाने के लिए बच्चों और शिक्षकों द्वारा संयुक्त रूप से तैयार की गई कलाकृतियों को प्रदर्शित करना।
- संगीत, खेल, कहानियों और कविताओं के द्वारा अधिगम के बहु-संवेदी चैनलों को सक्षम करना।
- यह गतिविधियाँ सीखने के वांछित परिणामों को प्राप्त करने में सहायक होती हैं और साथ ही बच्चों और शिक्षकों, दोनों ही के लिए बहुत मज़ेदार होती हैं। वे भय और चिन्ता को दूर करने और विद्यार्थियों में सीखने की सजगता के निर्माण में भी सहायक हैं।

एक व्यापक योजना के तहत उठाए गए इन सरल और छोटे कदमों से शिक्षकों और बच्चों के लिए दो बहुत महत्त्वपूर्ण परिणाम सामने आए। एक, शिक्षकों ने महसूस किया कि *पाठ्यपुस्तकों के बिना* भी अधिगम के वांछित परिणामों को प्राप्त करना सम्भव है। जब उन्होंने अधिगम के कुछ परिणामों का मिलान अपनी उन शैक्षणिक प्रक्रियाओं के साथ किया जिन्हें उन्होंने हाल ही में आज़माया था तो वह उनके लिए एक नवीन अंतर्दृष्टि प्रदान करने वाला 'अहा' क्षण था। दूसरा, और शायद अधिक महत्त्वपूर्ण परिणाम वह बदलाव था जो इस तरह की गतिविधियों से उनकी कक्षा के वातावरण में आया था - भावनात्मक मौसम में एक निश्चित रूप से बदलाव आया था। निःसन्देह, यह सिर्फ़ एक छोटी-सी शुरुआत थी और जब तक पूरी व्यवस्था की सच्चाई अपरिवर्तित रहती है, तब तक नन्दिता जैसे शिक्षकों को एक लम्बा रास्ता तय करना होगा। लेकिन यह भी सच है कि हज़ारों मील की यात्रा पहले क़दम के साथ ही शुरू होती है - वह क़दम जो नन्दिता ले चुकी हैं।



शुभ्रा चटर्जी 1986 से स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रही हैं। उन्होंने एक शिक्षक, करिकुलम डेवलपर, प्री-स्कूल इनक्यूबेशन विशेषज्ञ, शिक्षक-प्रशिक्षक और शिक्षक तैयारी कार्यक्रमों के डिज़ाइनर के रूप में कार्य किया है। उन्होंने विभिन्न सामाजिक-आर्थिक क्षेत्रों में कार्य किया है। वे विक्रमशिला की संस्थापक-निदेशक हैं, जो एक ऐसा संगठन है, जो देश भर में शैक्षिक गुणवत्ता और समता के मुद्दों पर काम करता है। इस संगठन की यात्रा *ग्रामीण* एनजीओ द्वारा संचालित प्री-स्कूल को शिक्षक सहायता प्रदान करने से शुरू हुई। यह संगठन जिन बच्चों के लिए कार्य करता है उनके विकास के साथ-साथ इसका ख़ुद का भी विकास हुआ है और अब यह भारत के कई राज्यों में K-10 स्तर पर काम करता है। हाल ही में शुभ्रा चटर्जी ने पश्चिम बंगाल, जम्मू-कश्मीर, उत्तर प्रदेश एवं असम में ICDS प्रणाली के लिए ECE पाठ्यक्रम को फिर से लिखने में तकनीकी विशेषज्ञता प्रदान की है। उनकी रुचि के क्षेत्रों में से एक है 'प्रारम्भिक वर्षों में भाषा अधिगम'। उनसे shubhra.chatterji@vikramshila.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल